उत्तराखण्ड में सामाजिक एवं राजनीतिक आन्दोलन

***सोनिया चमल्याल**

सारांश

उत्तराखण्ड में अनेक आन्दोलन हुए हैं। उत्तराखण्ड में 1857 के विद्रोह का सूत्रपात करने का श्रेय काली कुमाऊँ के वीर नेता कालू महरा को जाता है। स्वाधीनता संग्राम में उत्तराखण्ड के वीरों द्वारा बढ़चढ़ कर भाग लिया गया। सैकड़ों शहीदों का देश की आजादी के लिए दिया गया बलिदान भावी पीढ़ी के लिए प्रेरणा दायक है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् राज्यों का पुर्नगठन हुआ कई नए राज्य अस्तित्व में आए। किन्तु जन–जागरण के अभाव में उत्तराखण्ड की मांग को कभी गंभीरता से नहीं लिया गया। मैदानी क्षेत्र से भिन्न परिस्थितियाँ व आवश्यकताओं ने एक नए राज्य का आधार रखा। उत्तर प्रदेश के अर्न्तगत पर्वतीय क्षेत्र के जिलों के विकास की धीमी गति और स्थानीय जनता की महत्वकांक्षा ने पृथक राज्य की नीव रखी। अपने अस्तित्व को बचाने हेतु पृथक पर्वतीय राज्य आन्दोलन तेज हो गया। अंततः नेतृत्व विहीन तथा गैर राजनीतिक आन्दोलन द्वारा उत्तराखण्ड की जनता अपनी स्पष्ट सोच को अभिव्यक्ति दे कर राष्ट्रीय मंच तक पहुंचाने में सफल हो गई। उत्तराखण्ड में विभिन्न समस्याओं के निराकरण हेतु होने वाले आन्दोलनों में नारी की महत्वपूर्ण भागीदारी रही है। पर्वतीय महिलाओं ने पुरूषों के कंधे से कंधा मिलाकर मद्य निषेध, खनन, पर्यावरण संरक्षण आदि आन्दोलनों में अपनी कर्मठता, जुझारूपन, सत्त संघर्षशीतला तथा संगठन शक्ति का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया। उत्तराखण्ड में स्वाधीनता से पूर्व एवं उत्तराखण्ड राज्य निर्माण के पश्चात् भी अनेकों आन्दोलन, टिहरी राज्य आन्दोलन, डोलापाल की आन्दोलन, सड़क आन्दोलन, कनकटा बैल बनाम भ्रष्टाचार आन्दोलन, शराब विरोधी आन्दोलन, कोटा खर्रा आन्दोलन, विश्वविद्यालय आन्दोलन एवं उत्तराखण्ड राज्य आन्दोलन आदिहैं। प्रस्तुत शोध पत्र में इन्ही आंदोलनों का उत्तराखण्ड के सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन में प्रभाव को परिलक्षित करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना– उत्तराखण्ड, उत्तर भारत में स्थित एक बहुत ही खूबसूरत राज्य है। उत्तराखण्ड का गठन भारत गणराज्य के सताइसवें राज्य के रूप में 9 नवम्बर 2000 को हुआ। इस राज्य का मूल नाम उत्तरांचल था जिसे परिवर्तित करके जनवरी 2007 में उत्तराखण्ड कर दिया गया था। राज्य में कुल तेरह जिले हैं। जिन्हें प्रमुख मण्डलों– कुमाऊँ और गढ़वाल के आधार पर बॉटा गया है।[1]

उत्तर प्रदेश का पहाड़ी भाग ही पर्वतीय राज्य 'उत्तराखण्ड' के रूप में गठित हुआ। उत्तराखण्ड के पूर्व में नेपाल देश स्थित है, और दोनों के मध्य काली नदी स्पष्ट सीमा बनाती है। इसके पश्चिमोत्तर में हिमांचल प्रदेश है। उत्तर में तिब्बत स्थित है। इसके दक्षिण में उत्तर प्रदेश के जनपद हैं। इस प्रकार पूर्व तथा उत्तर में नेपाल तथा तिब्बत (चीन) इसकी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा बनाते हैं।[2]

कुमाऊँ–गढ़वाल बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री तथा यमनोत्री जैसे तीर्थस्थलों, अपने अद्वितीय प्राकृतिक सौन्दर्य एवं स्वास्थ्यवर्द्धक जलवायु के कारण देश–विदेशों के धर्मानुयाइयों तथा पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बिन्दु रहा है। भारत के स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भाग लेने, भारत–चीन तथा भारत–नेपाल सम्बन्धों की अनिश्चितता और यहाँ के निवासियों का बहुत बड़ी संख्या में भाग लेने के कारण इस सीमांत प्रदेश का राजनैतिक तथा सामरिक महत्व भी कम नही है।[3]

प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर उत्तराखण्ड की विशिष्ट भू–आकृति, सांस्कृतिक पहचान, बोली, भाषा और रहन–सहन के कारण भारत के शेष भू–भाग से इसकी अलग–अलग पहचान है।[4]

*शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, डी.एस.बी. कैम्पस, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

आदिकाल में उत्तराखण्ड को देवभूमि एवं मनीषियों की भूमि कहा गया। 'मानसखण्ड' व 'केदारखण्ड' से बनी इस पुण्य भूमि में अनेक राजाओं व राजवंशों ने शासन किया है। पुराणों में उत्तराखण्ड को स्वर्गभूमि भी कहा गया है।[5] ब्राह्य आक्रमणकारियों ने भी अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए इस राज्य पर शासन किया वर्ष 1791–92 में कुमाऊँ एवं 1804 में गढ़वाल पर गोरखाओं ने कब्जा किया। गोरखाओं के दमन चक्र से अंग्रेजों ने 1815 में सिंगौली की संधि के तहत उत्तराखण्ड को मुक्त किया।[6] गोरखों की पराजय एवं संगोली की संधि से ही उत्तराखण्ड क्षेत्र में ब्रिटिश उपनिवेशवाद का युग प्रारम्भ हुआ।[7]

इस दीर्घ अंग्रेजी हुकुमत में स्थानीय जनता ने अनेक कष्टों को सहा कुछ स्थानीय वीरों ने इनका जमकर विरोध भी किया। फलस्वरूप विभिन्न प्रकार के आन्दोलन हुए। उत्तराखण्ड में अनेक आन्दोलन हुए जिनमें कुली बेगार, डोला पालकी आन्दोलन, शराब विरोधी आन्दोलन, चिपको आन्दोलन (वन आन्दोलन), विश्वविद्यालय आन्दोलन, उत्तराखण्ड आन्दोलन आदि हुए हैं। स्वतन्त्रता आन्दोलन में भी उत्तराखण्ड की जनता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

कुली बेगार आन्दोलन

समाजिक आन्दोलन में कुली बेगार आन्दोलन का अविस्मरणीय योगदान है। जिसमें जाति–पाति के बन्धनों को तोड़ कर सम्पूर्ण स्थानीय जनता को एक जुट होकर इस कुप्रथा का अन्त करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में कुली आन्दोलन महत्वपूर्ण सामाजिक एवं राजनीतिक आन्दोलन रहा। उत्तराखण्ड में बेगार का स्वरूप कुली बेगार, कुली उतार, कुली बर्दायश के रूप में व्यापत रहा। परमारों, चन्दों एवं गोरखा के समय में भी बेगारी ली जाती थी किन्तु ब्रिटिशकाल में इसका स्वरूप जटिल हो गया। लोगों का नाम रजिस्टर में अंकित हो जाने के कारण इससे बच निकलना असम्भव हो गया था। बेगार का स्वरूप ब्रिटिश काल में घृणित हो गया था। [8]

कुली बेगार के अन्तर्गत पारिश्रमिक नही दिया जाता था एवं इसमें सार्वजनिक निर्माण कार्य के लिए बेगार की जाती थी, दौरे पर आने वाले अंग्रेज अधिकारियों के कार्य करने होते थे। कुली बर्दायश के अन्तर्गत अंग्रेज अधिकारियों एवं उनके नौकर चाकरों के लिए निःशुल्क खाद्यान्न, की व्यवस्था करनी होती थी। इसके अन्तर्गत अनाज, तरकारी, घी, दूध, मुर्गी, अण्डे, बकरी, पानी, लकड़ी, घास, बर्तन आदि दिया जाता था। इन सामग्री के अतिरिक्त बिस्तर की भी व्यवस्था करनी होती थी।[9] कुली उतार के अन्तर्गत सरकार को पारिश्रमिक देना होता था इसका उल्लंघन करने पर पाँच से पन्द्रह रुपये तक आर्थिक दण्ड देना होता था ।[10]

कुली उतार, बेगार, बर्दायश जैसे कानूनों से सम्पूर्ण कुर्माचल के लोग दुःखी थे। जनता में इन कुप्रथाओं के खिलाप ज्वाला सुलगने लगी। वर्ष 1920 में अल्मोड़ा से पंडित बद्रीदत्त पांडे, विक्टर मोहन जोशी, चिरंजी लाल साह ने कांग्रेस के सम्मेलन नागपुर में भाग लेने के बाद वहाँ से लौटकर इन कुप्रथाओं के खिलाफ रणनीति बनाई।[11]

योजना के तहत वह 13 जनवरी 1920 की चामी गांव के हरज्यू मंदिर पहुंचे अंग्रेज अफसर डाईबिल ने उन्हें जुलूस न निकालने की चेतावनी दी लेकिन उन्होंने एक न सुनी। जुलूस में नगर के श्याम लाल साह, शिव लाल वर्मा, चंद्र सिंह शाही, समेत कई लोग शामिल हो गए। गोरी सरकार का कड़ा पहरा लगा हुआ था पर बड़ी संख्या में पहुँचे क्रान्ति वीरों ने अंग्रेज की परवाह किए बिना क्रान्तिकारियों ने सरयू नदी सभी कुली बेगार, कुली उतार एवं बदीयंश जैसे कानूनों के रजिस्टर बहा दिए।[12]

उत्तराखण्ड में बेगार विरोधी आन्दोलन के प्रमुख केन्द्र बागेश्वर में जनवरी 1921 में मकर संक्रान्ति मेले के अवसर पर जनता ने बेगार रजिस्टरों को सरयू नदी में डुबोकर आन्दोलन का शंखनाद किया''

गढ़वाल में भी बेगार आन्दोलन चला गढ़वाल क्षेत्र में मुकुन्दीलाल बैरिस्टर एवं अनुसुइया प्रसाद बहुगुणा ने इस आन्दोलन का नेतृत्व किया। अन्ततः जनता के प्रशासन पर बढ़ते दबाव के कारण शासन को बेगार प्रथा को समाप्त करने

का निर्णय लेना पड़ा। इस प्रकार 1923 के अन्त तक कुमाऊँ कमिश्नरी से बेगार प्रथा को समाप्त कर दिया गया था। ''तत्कालीन परिस्थितियों में इसे आंचल शासन को शोषणकारी नीतियों के ऊपर जनशक्ति की विजय के रूप में मान्यता मिली। आन्दोलन की सफलता और जन–प्रतिक्रियाओं से जनता का उत्साहवर्द्धन हुआ। स्वामी सत्यदेव ने उत्तराखण्ड में बेगार विरोधी आन्दोलन को सहयोग की प्रथम ईंट के रूप में सम्बोधन किया ।[13]

डोला–पालकी आन्दोलन

उत्तराखण्ड में डोला पालकी आंदोलन स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान जहाँ एक ओर राजनीतिक स्वतन्त्रता का आंदोलन चल रहा था वहीं दूसरी ओर सामाजिक आंदोलन भी चल रहे थे। इसी क्रम में गढ़वाल में डोला–पालकी आन्दोलन का अपना महत्व है, सामाजिक कुरीतियों के अंत करने तथा समाज में एक नया सवेरा लाने के लिये डोला–पालकी आंदोलन का अविस्मरणीय योगदान है। उत्तराखण्ड का डोला–पालकी आन्दोलन आधुनिक भारतीय इतिहास में निम्न जाति उत्थान का ही एक रूप है। भारत के सांस्कृतिक परिवेश में सामान्यतः दुल्हन के लिए डोला एवं दूल्हे के लिए पालकी का प्रयोग किया जाता था। उत्तराखण्ड के गढ़वाल क्षेत्र में जातीय श्रेष्ठता के परिणामस्वरूप समाज के प्रभावशाली सवर्णो ने इसे अपना विशेषाधिकार मान लिया तथा जाति प्रथा की विशेषताओं के अन्तर्गत शिल्पकारों को उनके विवाह के अवसर पर डोला–पालकी का उपयोग करने से वर्जित कर दिया।

20वीं शताब्दी के नवजागरण काल में भारत में चल रहे सुधारवादी आन्दोलन का प्रभाव इस पर्वतीय संभाग में भी आया। इस प्रकार सन् 1924 में स्थानीय नेता जयानन्द भारती के नेतृत्व में डोला–पालकी बाराते संगठित की गई। शिल्पकारों द्वारा डोला–पालकी सहित बारात निकाली गई। दयानन्द भारती जी ने इलाहाबाद हाईकोर्ट में मुकदमा दायर किया। उच्च न्यायालय में शिल्पकारों द्वारा याचिका पर निर्णय सुनाते हुए 27 फरवरी 1936 में शिल्पकारों को डोला–पालकी का प्रयोग करने का कानूनी अधिकार दिया गया ।[14]

स्वतन्त्रता आन्दोलन

उत्तराखण्ड में जनता ने स्थानीय आन्दोलनों के साथ–साथ स्वाधीनता संग्राम में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उत्तराखण्ड में 1857 के विद्रोह का सूत्रपात करने का श्रेय कुमाऊँ के वीर नेता कालू महरा को जाता है।[15]

स्वाधीनता संग्राम में अनेक अवसरों पर बढ़–चढ़कर भाग लेने तथा अपने प्राणों की बाजी लगा देने में उत्तराखण्ड के वीरों ने स्वतन्त्रता की पौध को अपने रक्त से सींचा है। ज्ञात–अज्ञात सैकड़ों शहीदों का देश की आजादी के लिए दिया गया बलिदान भावी पीढ़ी के लिए प्रेरणादायक है। उत्तराखण्ड में सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थानीय समस्याओं के हक के रूप में चलाया गया। यहां कांग्रेस कमेटी द्वारा नमक कानून के स्थान पर स्थानीय जन समस्याओं, लगान व शराबबन्दी हेतु आन्दोलन चलाने का निर्णय लिया।[16]

भारत छोड़ो आन्दोलन में भी उत्तराखण्ड के लोंगों ने बढ़चढ़कर भाग लिया, 10 अगस्त, 1942 को गांधीजी की जय। अंग्रेजो भारत छोड़ो। इन्कलाब जिन्दाबाद आदि नारों के साथ अल्मोड़ा में जनादोलन प्रारम्भ हुआ। देघाट, सालम, खुमाण आदि स्थानों पर गोली काण्ड हुआ। सल्ट की घटना को महात्मा गांधी ने 'दूसरी बरादोली की संज्ञा दी।[17]

पर्यावरण आन्दोलन

पर्यावरण की अनुकूलता और प्रतिकूलता के साथ उसकी सुरक्षा आज की आवश्यकता है। पृथ्वी पर मनुष्यों की बढ़ती जनसंख्या और उसके साथ तीव्र गति से बढ़ती आवश्यकता ने प्रकृति के सहयोग के स्थान पर संघर्ष के लिए उत्साहित किया है। हाल के दशकों में नगरीकरण और औद्योगीकरण के नाम पर बिना सोचे समझे अंधाधुंध काटे गये वनों के कारण

भूमि अपरदना भूस्खलन तथा बाढ़ जैसी समस्याओं का प्रकोप बढ़ गया है। चिपको आन्दोलन वनों के विनाश को बचाने की दिशा में एक कदम है[18]

उत्तराखण्ड पर्वतों एवं झीलों का क्षेत्र है ऐसे में पर्यावरणीय आन्दोलन का उल्लेख अति आवश्यक हो जाता है। पर्यावरण को बचाने के लिए स्थानीय जनता ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन पर्यावरणीय आन्दोलन चिपको, मैली, पाणी राखो, हिमालय बचाओं आदि आंदोलन अत्यंत महत्वपूर्ण रहे। चिपको आंदोलन एक ऐसा सामाजिक एवं पारिस्थितिक जनआंदोलन रहा जिसमें महात्म गांधी की सत्याग्रह अहिसात्मक प्रतिरोध आदि तकनीकों का प्रयोग पेड़ों को बचाने के लिए उनसे 'चिपक' कर किया गया।[19] चिपको के अन्तर्गत सर्वाधिक महत्वपूर्ण आंदोलन गोपेश्वर के निकट रैणी नामक स्थान पर गौरा देवी के नेतृत्व में महिलाओं का एक प्रसिद्ध आंदोलन हुआ। मार्च 1974 में रैणी (चमोली) नामक स्थान पर गौरा देवी के नेतृत्व में महिलाओं का एक प्रसिद्ध आंदोलन हुआ 'चिपको' आंदोलन को अपने शिखर पर पहुँचाने में पर्यावरणविद् सुन्दर लाल बहुगुण और चंडी प्रसाद भट्ट ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई,।

पर्यावरण जागरूकता के लिए समर्पित 'मैती' आन्दोलन चिपको आन्दोलन के समान महिलाओं द्वारा शुरू किया आन्दोलन रहा, हिमालय ह्रास से दुखी होकर वहाँ की महिलाओं ने इस आन्दोलन के तहत वृक्षारोपण का कार्य शुरू किया। इन आन्दोलनों में 'पाणी राखो' हिमालय बचाओं आन्दोलन प्रसिद्ध आन्दोलन रहे। इस प्रकार उत्तराखण्ड हिमालय क्षेत्र में पर्यावरणीय आन्दोलनों ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याती प्राप्त की।[20]

विश्वविद्यालय आन्दोलन 1972

वर्ष 1973 से पूर्व उत्तराखण्ड में कोई विश्वविद्यालय नहीं था उत्तराखण्ड के सभी डिग्री कालेज और महाविद्यालय आगरा विश्वविद्यालय से संचालित होते थे। जिससे छात्रों को असुविधा का सामना करना पड़ता था। मार्कशीट में सुधार से लेकर बैक पेपर, डिग्री लाने तक के लिए छात्रों को चमोली, पिथौरागढ़ से आगरा जाना पड़ता था। उन दिनों यातायात के सुगम साधन भी नहीं थे, इस असमानता ने धीरे–धीरे एक आन्दोलन को जन्म दिया जिसका नाम था 'कुमाऊ– गढ़वाल विश्वविद्यालय बनाओ आन्दोलन'' इस आन्दोलन की धधक सम्पूर्ण उत्तराखण्ड में फैल गई। सम्पूर्ण उत्तराखण्ड आन्दोलन मय हो गया। इस अन्दोलन का तत्कालीन प्रशासन द्वारा दमन भी किया गया। दिनांक 15 दिसम्बर 1972 को पिथौरागढ़ राजकीय महाविद्यालय के छात्र प्रदर्शन कर रहे थे उनके साथ जूलूस में इण्टर कालेजों के छात्र, विभिन्न सामाजिक संगठनों के कार्यकर्ता थे। पुलिस ने इन पर गोलिया बरसा दी। इस गोलीकांड के बाद यह आन्दोलन प्रचण्ड हो गया। जगह–जगह आन्दोलन की आग तेज हो गई। अंततः परिणामस्वरूप 1 मार्च, 1973 को कुमाऊँ और गढ़वाल विष्वविद्यालय की स्थापना की गई ।[21]

शराब विरोधी आन्दोलन

शराब ने उत्तराखण्ड के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक परिदृश्य को बुरी तरह प्रभावित किया है। उमेश डोभाल ने शराब के खिलाफ एक ऐसे आन्दोलन की शुरूआत की जो राज्य की अन्य जनता के लिए ताकत बनी। उत्तराखण्ड में शराब के खिलाफ 1962 से ही आन्दोलन शुरू हो चुका था। इसके फलस्वरूप 1970 टिहरी और पौड़ी में शराब बंद की गई। उत्तराखण्ड की स्थिति 1983 तक आते–आते और भी खराब हो गई जब यहां के युवा व बच्चे भी दवाइयों की शीशियों में शराब पीते देखे गए जहां सड़क बिजली, पानी नहीं पहुचा वहां भी शराब बड़ी सुगमता से पहुंचने लगी। ऐसी स्थिति में महिलाओं ने शराब विरोधी आन्दोलन के साथ ही नशा नहीं रोजगार दो आन्दोलन की शुरूआत की। दीपा शराब विरोधी आन्दोलन में अपने विशिष्ट योगदान के लिए 'टिचरी माई' कहलाई।[22] उत्तराखण्ड में स्वाधीनता से लेकर उत्तराखण्ड राज्य निर्माण तक छोटे–बड़े अनेक आंदोलन हुए।

उत्तराखण्ड आन्दोलन

पृथक राज्य प्राप्ति के लिए उत्तराखण्ड आन्दोलन बीसवीं शताब्दी में होने वाला अन्तिम आन्दोलन रहा। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात राज्यों का पुनर्गठन हुआ। कई नए राज्य अस्तित्व में आए, किन्तु जन–जागरण के अभाव में पृथक उत्तराखण्ड राज्य की मांग को कभी गंभीरता से नहीं लिया गया। भौगोलिक निरंतरता, वित्तीय आत्म–निर्भरता, प्रशासनिक असुविधा, भविष्य के लिए विकास की भावी संभावनायें और एक भावी पृथक राज्य की कसौटी पर खरा उतरने पर भी यह क्षेत्र देश के शीर्ष नेतृत्व का ध्यान अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सका। अंततः इस क्षेत्र का जन मानस जिसमें छात्र कर्मचारी, पूर्व सैनिक। महिलायें तथा विभिन्न विचारधाओं से जुड़े व्यक्ति थे। सभी एक मंच पर आ गए। अपने अस्तित्व को बचाने हेतु पृथक पर्वतीय राज्य आन्दोलन तेज हो गया। अंततः और राजनीतिक तथा नेतृत्व विहीन आन्दोलन उत्तराखण्ड की जनता अपनी स्पष्ट सोच की अभिव्यक्ति देकर राष्ट्रीय मंच तक पहुँचाने में सफल हो गई। उत्तराखण्ड आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी महत्वपूर्ण है। उत्तराखण्ड की महिलाएं यहां की धुरी हैं। इस आन्दोलन में महिलाओं ने पुरूषों के कंधे से कंधा मिलाकर तथा कही–कहीं अग्रणी बनकर अपना कर्मठता, जुझारूपन, सतत् संघर्षशीलता तथा संगठन शक्ति का उत्कृष्ठ उदाहरण प्रस्तुत किया है। सन 1897 में उठी उत्तराखण्ड राज्य की मांग आन्दोलन में परिवर्तित हो गयी और 9 नवम्बर 2000 को राज्य गठन के साथ ही यह आन्दोलन समाप्त हुआ।[23]

इस प्रकार बीसवीं शताब्दी के जनआन्दोलनों का एक सुदीर्घ इतिहास देखा जा सकता है। जिसमें निरंतर राजशाही से लोकशाही की ओर परिणत होने का उत्तरोतर अनुक्रम बना रहा। इन आन्दोलनों में लोकतांत्रिक मूल्यों का प्रसार, समृद्धि एवं कही–कही बिखराव भी देखा जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. फोनिया, केदार सिंह – उत्तरांचल राज्य निर्माण का सक्षिप्त इतिहास विनसर पब्लिशिंग कम्पनी देहरादून, 2005, पृष्ठ सं० 11, 12
2. कठोच,यशवन्त सिंह – उत्तराखण्ड का नवीन इतिहास, विनसर पब्लिशिंग कम्पनी देहरादून। पृष्ठ – 10
3. शर्मा, डी.डी. – उत्तराखण्ड का सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, उत्तरायण प्रकाशन, हल्द्वानी – 2003
4. भट्ट,त्रिलोक चन्द्र – उत्तराखण्ड आन्दोलन, पृथक राज्य आन्दोलन का ऐतिहासिक दस्तावेज, तक्षशिला प्रकाशन – 2000 पृष्ठ 20–21
5. नौटियाल, शिवानंद – गढ़वाल का सांस्कृतिक वैभव – पृष्ठ 1
6. डबराल, शिव प्रसाद – गोरख्याणी– 2 पराजित होकर प्रत्यावर्तन, वीरगाथा प्रकाशन, विद्याभवन–दोगडडा, गढ़वाल– पृष्ठ 190–192
7. नौटियाल, शिवानंद – गढ़वाल का सांस्कृतिक वैभव – पृष्ठ 22
8. रतूड़ी, हरिकृष्ण – गढ़वाल का इतिहास (1938), पृष्ठ 455
9. स्टोवल, बी० ए० – ''मैनुअल ऑफ लैण्ड टेन्योर्स इन कुमाऊँ टेंक्सस, इलाहाबाद 1907, पृ० 13
10. डबराल, शिव प्रसाद – उत्तराखण्ड का इतिहास। खण्ड – 6 संवत– 2032, पृ० 173
11. पाठक, शेखर – राइज एण्ड ग्रोथ ऑफ कुमाऊँ परिषद – 1916–26, प्रोसिडिंग्स ऑफ इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस, 1987

12. साह, आशुतोष – उत्तरांचल हिमालय, समाज, संस्कृति इतिहास एवं पुरातत्व उत्तरांचल में बलात (कुली बेगार का इतिहास) बुक डिपो,

13. मनराल,धर्मपाल – स्वतन्त्रता संग्राम में कुमाऊँ गढ़वाल का योगदान – 1978

14. भक्तदर्शन, – 1952 गढ़वाल की दिवंगत विभूतियॉ लैसडोन, 1952 पृष्ठ 435–436

15. मनराल, धर्मपाल सिंह– स्वतन्त्रता संग्राम में कुमाऊ –गढ़वाल का योगदान (1857–1941 तक) प्रकाश बुक डिपो, बरेली।

16. भाकुनी,वीर सिंह – संग्रामियों के सरताज पं० बद्रीदत्त पाण्डे, बरेली पृष्ठ – 16

17. शिवा, वंदना – द वूमन ऑफ चिपको स्टेइंग एलाइव : वूमन इकोलोजी एण्ड डेवलपमैण्ट, जैड बुक पब्लिकेशन, 1988

18. नौटियाल, विकास – उत्तराखण्ड (आर्थिक, सांस्कृतिक राजनीतिक चेतना व जनादोलनों का समग्र विमर्श

19. नौटियाल, विकास – उत्तराखण्ड (आर्थिक, सांस्कृतिक राजनीतिक चेतना व जनादोलनों का समग्र विमर्श)

20. भट्ट, त्रिलोक चन्द्र – उत्तराखण्ड आन्दोलन, पृथक राज्य आन्दोलन का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, तक्षशिला प्रकाशन – 2000

समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं

1. अमर उजाला ब्यूरा – बागेश्वर, सोमेश्वर, 15 अगस्त 2016

2. शक्ति साप्ताहिक, – 8 फरवरी 1923

3. संतोष कुमार, – पर्यावरण संरक्षण में चिपको आन्दोलन की भूमिका, कुरूकक्षेत्र जून – 2012